वीर सम्वत् २४७४
विक्रम सम्वत् २००५
ईस्वी सन् १९४८

प्रथम आवृत्ति
१००१

मूल्य
सात आना

मुद्रक
मानमल जैन "मार्त्तण्ड"
श्री वीरपुत्र प्रिंटिंग प्रेस,
गोटालेन नयाबाजार, अजमेर

* श्री *

जैन कन्या बोधिनी (तृतीय भाग)

का—

शुद्धिपत्र.—

शुद्ध	अशुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
होजायगे	होएँगे	७	१६
बातों को	बातों से	१२	६
राजा ने स्वीकार	राजा न कहा स्वीकार	१४	१६
मेरी बात पर	मरी पर बातर	१५	१०
सामायिक एक	एक सामायिक	१६	१७
सामग्रियों	मामग्रियों	१८	८
चतुर्विंशति	चुतुर्विंशति	२०	८
सामायिक	सामयिक	२४	१६
अतिचारी	अचितारी	२५	४
भ्रष्ट	भ्रप	२७	८
दुष्कृत हो	दुष्कृत	२७	१०
श्वास	श्वाम	२७	१४
तब तक	जब तक	२६	३
एक उपाय	एक उपाय था	२७	१
दलाली	मरी दलाली	२८	४
उपस्थित	उपास्थत	३७	११
करन	करल	४०	५
समझ में	समझ	४२	७
अधा	अध	४६	२
बध	घध	४६	१५
बुध	बध	४६	१८
बतावे	बतावे	५६	१७

	शुद्ध	अशुद्ध
घि	कारण	का कारण
ईरा	मुँह	मुँह पर
	फिर स्त्री	फि स्रीर
	कहता	कहना
	दो करता	दो देता
	सहस्त्रानिक	महस्त्राधिप
	विसर्जित	विसजत
	यद	गुद्र
	मंडूक	सुअर
	धमुता	थेएता
	सोही	सहाँ
	नाम जा	नाम ता
	सीधी	सीधी
	जिका	जिका जीका
	पड़ियाँ	पड़िया
	पृष्ठ	पृष्ठ
	उनकी सेना	उनका सनन
	जाओ	आ ा जाओ

सूचना पृष्ठ ८२ में दूसरी पंक्ति के नीचे यह पंक्ति होनी चाहिए 'अब तक अर्हत् भगवंतों को नमस्कार कर नहीं पा...

पृ ७८ में पंक्ति १६ 'शेष आयु का बंध होता है ... धर्म श्रावक धर्म एवं तपस्या की साधना करने से ।' इस स्थान में ऐसा पढ़ना चाहिए '४—मुनिधर्म, श्रावक ... एवं तपस्या की साधना करने से देव आयु का बंध होता ...

पृ ६७ पंक्ति १५—'छोटी स्थिति न हो ता ... आगे बड़ी स्थिति वाले और शिथिल ... वाले ... करता है' ऐसा पढ़ना चाहिए ।

प्रकाशक के दो शब्द

प्रिय बन्धु !

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल के द्वारा स्वाध्याय माला पहला ... आपके सामने 'जैन कन्या बोधिनी' के दो ... रखे जा चुके हैं। हमें प्रसन्नता है कि आज हम आपकी सेवा में 'जैन कन्या बोधिनी' का तीसरा भाग भी ... रहे हैं।

इस पुस्तक का सम्पादन प० रत्नकुमारजी जैन 'रत्नेश' ने ... था किन्तु संशोधन में बिलकुल नयासा ही परिवर्तन हो ... फिर भी उनका परिश्रम है। भाषा के संशोधन में प० ... चन्द्रजी अजमेर ने काफी परिश्रम उठाया है। एतदर्थ ... को धन्यवाद।

... मंडल श्रीमज्जैनाचार्य पूज्य श्री हस्तीमलजी म० सा० का चिर ऋणि है। आज तक जो साहित्य प्रकाशित हुआ है ... सब आपकी देख रेख में सम्पादित हुआ है। अत इस अवसर पर हम कृतज्ञता प्रकट करना अपना कर्तव्य समझते हैं।

तीसरे भाग के प्रकाशन में स्व० सेठ फतेमलजी के सुपुत्र उदयमलजी लोढ़ा और सेठ बाहुमलजी लोढ़ा ने आर्थिक उदारता प्रदर्शित की है एतदर्थ धन्यवाद। आशा है समाज के

अन्य श्रीमान् भी लोढ़ाजी का अनुकरण कर उत्साह बढ़ायेंगे तो हम समय २ पर विशेष सेवा कर सकेंगे।

अंत में श्री सरदारमलजी सा० लोढ़ा तथा प्रेस के संचालक श्री मानमलजी जैन को धन्यवाद देना आवश्यक मानते हैं जिनके सहयोग से पुस्तक का मुद्रण हो सका है।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल, जोधपुर
१ जुलाई १९४८

मन्त्री—
चम्पालाल कर्णावट
बी० ए० एल-एल० बी०

जैन कन्या-बोधिनी

तृतीय भाग

पाठ १

प्रार्थना

वह शक्ति हमें दो दयानिधे !
कर्त्तव्य मार्ग पर डट जावें।
पर सेवा, पर उपकार में हम;
जग जीवन सफल बना जावें।
हम दीन, दुखी, निबलों, विकलों,
के सेवक बन सन्ताप हरें।

जो हैं भूले भटके अटके।
उनको तारें खुद तर जावें।
छल, द्वेष, कपट, पाखंड, झूठ,
अन्याय से निश दिन दूर रहें।
जीवन हो शुद्ध, सरल अपना,
शुचि प्रेम-सुधा नित बरसावें।

निज आन बान मर्यादा का।
प्रभु ! ध्यान रहे, अभिमान रहे।

जिस देश, जाति में जन्म लिया।
बलिदान उसी पर हो जावें।

१—जीवन को उत्तम बनाने के लिये कौन २ से गुण आवश्यक हैं?
२—हमें कौन २ से दुर्गुणों से दूर रहना चाहिए?
३—किन बातों का हमें सदा ध्यान रखना चाहिए?
४—प्रार्थना के लाभ बताओ?
५—प्रार्थना कण्ठस्थ कर सुनाओ?

पाठ २

नवकार मंत्र

[कुसुम की ध्वनि]

नमस्कार हो अरिहंतों को, राग–द्वेष–रिपु–संहारी।
नमस्कार हो श्रीसिद्धों को, अजर अमर नित अविकारी।
नमस्कार हो आचार्यों को, संघ—शिरोमणि आचारी।
नमस्कार हो उपाध्यायों को, अक्षय श्रुत निधि के धारी।
नमस्कार हो साधु सभी को, जग में जग ममता मारी।
त्याग दिए वैराग्य भाव से, भोग भाव सब संसारी।
पांच पदों को नमस्कार यह, नष्ट करे कलिमल भारी।
मंगल-मूल अखिल मंगल में, पाप भीरु जनता तारी।

—उपाध्याय मुनि श्री अमरचन्द्रजी

पाठ ३

वन्दन पाठ

तिक्खुत्तो का हिन्दी पद्यानुवाद

[लावनी की ध्वनि]

तीन बार गुरु वर ! प्रदक्षिणा, आदक्षिण मैं करता हूँ।
वन्दन, नति, सत्कार और, सम्मान हृदय से करता हूँ।
मंगलमय, कल्याण रूप, देवत्व भाव के धारक हो।
ज्ञान रूप हो प्रबल अविद्या, अंधकार संहारक हो।
पर्युपासना श्री चरणों की, एक मात्र जीवन धन है,।
हाथ जोड़कर शीश झुकाकर, बार बार अभिवन्दन है।

—उपाध्याय कवि श्रीअमरचन्दजी

पाठ ४

गहनों से हानियाँ

प्यारी कन्याओं! तुम को मालूम होगा कि गहनों से क्या २ हानियाँ होती हैं। ये कभी २ बच्चों के लिये प्राणघातक भी बन जाते हैं।

यह तो तुम अपने गाव में भी सुना करती होंगी कि कई लड़कियों ने अपने गहने खो दिये, तो कई

लड़कियों के गहने चोर चुरा कर भाग गये। इस तरह माल की हानि तो होती ही है, लेकिन कभी २ इनके पीछे जान भी चली जाती है। कई दुष्ट लोग गहने पहने हुए छोटे २ लड़के लड़कियों को फुसलाकर एकान्त स्थान में ले जाते हैं और गहनों के खातिर उन्हें मार डालते हैं।

एक समय की बात है कि एक सेठजी मन बहलाने के लिये अपने कुटुम्ब सहित एक बगीचे में गये। बगीचा गाँव से कुछ दूर एक पहाड़ के पास था। सेठजी के साथ एक पांच साल का छोटा बालक भी था। जिसके गले में सोने की चैन और हाथों में कड़े थे। वह भी बगीचे में घूमने लगा और तरह २ के फूलों को देखने लगा। देखते २ वह सब की आंखों से ओझल हो गया। किसी को उसका ध्यान ही न रहा। फिर क्या था? जो लोग इसी ताक में घूम रहे थे, उन्होंने बच्चे को पकड़ कर एक चट्टान के नीचे दबा दिया और उसके सब गहने उतार कर ले भागे। कुछ देर बाद जब सेठजी को यह पता चला तो उन्हें बहुत रंज हुआ। वे बहुत पछताने लगे। लेकिन अब क्या हो सकता था? बच्चा सदैव के लिये चल बसा था।

सेठजी ने उसी दिन से अपने बच्चों को गहने न पहनाने की प्रतिज्ञा ले ली।

देखो, गहनों से कैसे बुरे परिणाम हो जाते हैं। इसलिये प्यारी कन्याओ! गहनों से अधिक मोह मत रक्खो। समय पर पहनो भी तो सावधानी रक्खो। जिससे कि तुमको जान और माल का नुकसान नहीं उठाना पड़े।

१—इस पाठ से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है?
२—गहने पहनने में क्या हानियाँ हैं?
३—सेठजी के लड़के के प्राण क्यों गए?



पाठ ५

सेठ की बुद्धिमानी

बसंतपुर के सेठ जिनदास बड़े बुद्धिमान थे। उनके कोई लड़का नहीं था। सेठ और सेठानी इससे सदा चिन्तित रहा करते थे। एक दिन रात को उनके घर में चोर आ घुसे। सेठजी को चिन्ता के मारे नींद नहीं आ रही थी। चोर को देख कर वे डर गये। लेकिन फिर उनके मन में विचार आया कि मेरे रहते हुए अगर

चोर माल चुरा ले जाएँगे तो दुनिया में मेरी हसी होगी। इसलिये अब कोई ऐसा उपाय करना चाहिये, जिसमे माल भी न जाय और चोर भी पकडे जाय। यह सोच कर उन्होंने पास में सोई हुइ सेठानी से कहा—क्योंजी अगर कल तुम्हारे लड़का हो जाय तो उसका क्या नाम रक्खोगी ?

सेठानी ने कहा—वाह ! अभी जिस बात की आशा ही नहीं, उसके नाम का क्या बात है ? जब बच्चा हो जायगा तो उसका नाम रखने में क्या देर लगेगी ? झट से कोई नाम रख लगे।

सेठजी ने कहा—अजी ! तुम तो भोली की भोली ही रहा। मेरा मतलब यह है कि जल्दी में नाम अच्छा नहीं रक्खा जाता। इसलिये अभी से सोच लेना चाहिये।

सेठानी ने कहा—तो आप ही बताइये क्या नाम रक्खा जाय।

सेठजी बोले—मेरे ख्याल मे तो अपने बड़े लड़के का नाम काजी रखना अच्छा है।

सेठानी बोली हा—बिल्कुल ठीक है। जिनके बच्चे नहीं जीते हैं उनके यहाँ पहले ऐसे ही नाम दिये

जाते हैं। अच्छा, अब दूसरे का नाम भी कहिये, क्या रक्खेंगे ?

सेठजी बोले— मैं तो समझता हूं उसका नाम मुल्ला रख दिया जाय। चोर भी चोरी करना भूल कर दोनों की बातें सुन रहे थे। वे मन ही मन यह सोच कर हंस रहे थे कि दोनों कैसे पागल हैं? जहाँ एक की तो आशा ही नहीं वहाँ दूसरे का नाम रख रहे हैं।

सेठानी मतलब समझ गई थी। उसने कहा—जी हाँ, कानी के साथ मुल्ला ही ठीक रहता है। अब तीसरे लड़के का नाम सोचना है।

सेठजी ने कहा—उसका नाम चोर रख देंगे। क्यों ठीक है न ?

सेठानी बोली—बिल्कुल ठीक है। मुझे तो तीनों नाम बहुत पसंद आये हैं।

सेठजी ने कहा—तब तो तुम्हारे तीन लड़के होवेंगे। जब छोटा लड़का कहीं बाहर चला जायगा तो तुम कानी और मुल्ला को पुकार कर उसे बुला सकोगी। लेकिन जब तीनों बाहर चले जाएँगे तो तुम उन्हें कैसे बुलाओगी ?

सेठानी ने कहा—कानी, मुल्ला, चोर ! घर आजाओ।

सेठजी ने कहा—तुम्हारी आवाज़ तो बड़ी धीमी है। जब वे दूर चले जाएँगे तो ऐसी धीमी आवाज़ को थोड़े ही सुनेंगे ? लो, मैं पुकारता हूँ। यह कह कर सेठजी ने ज़ोर से पुकारा काजी मुल्ला चोर ! काजी मुल्ला चोर ! सेठजी की आवाज़ सुनते ही गाज में गश्त लगाते हुए कोतवाल आगये। जिन्हें लोग काज़ी कहते थे। चौकीदार मुल्ला भी आ गया। उसने पूछा चोर कहाँ हैं ?

सेठजी ने तुरन्त कोने में, छिपे हुए चोरों को पकड़ा दिया। चोर हँस रहे थे। काज़ी ने आश्चर्य से पूछा—अरे ! तुम को हँसी क्यों आ रही है ? चोरों ने सारा हाल कह सुनाया। जिसे सुन कर काजी और मुल्ला भी हँसने लगे और सेठजी की तारीफ करने लगे।

प्यारी कन्याओ ! जो कठिन समय में भी इस प्रकार हिम्मत रखता है और बुद्धिमानी से काम लेता है, उसकी दुनियाँ में तारीफ होती है।

१—सेठजी ने क्या बुद्धिमानी की ?
२—चोरों ने क्या समझा ?
३—काजी कौन थे ?



पाठ ६

अभक्ष्य

अध्या०—सुभद्रा ! नहीं खाने योग्य पदार्थ, जिनको खाने से अधिक जीवों की हिंसा होती हो तथा जिनके सेवन से मन में विकार उत्पन्न हो, उन्हें अभक्ष्य कहते हैं।

सुभद्रा—अभक्ष्य पदार्थ कौन २ से हैं।

अध्या०—दुनिया में अभक्ष्य पदार्थ कई तरह के हैं। लेकिन उनमें से कुछ के नाम तुम्हें बताती हूं।

बड़ के फल, पीपल के फल और गूलर के फल कभी नहीं खाने चाहिये। क्योंकि इन फलों में बहुत जीव होते हैं। मांस और मदिरा की प्राप्ति भी असंख्य जीवों की हिंसा से होती है। इनके सेवन से मनमें विकार उत्पन्न हो जाते हैं। अतः ये सर्वथा त्याज्य हैं। तुमने सुना होगा कि आजकल बाजारों में विलायती दवाइयें बहुत बिकती हैं। जिनमें मदिरा-स्प्रीट चरबी आदि चीजों का प्रयोग रहता है। कई दवाइयें जानवरों को मारकर भी बनाई जाती हैं। जैसे कि मच्छियों का तैल आदि। ये सब अभक्ष्य हैं। इनका उपयोग जीवन में जहां तक हो सके नहीं करना चाहिये।

सुभद्रा—लेकिन जब बीमारी हो जाय और दवा लेना जरूरी हो तब क्या करें ?

अध्या०—सुभद्रा ! कई ऐसी भी दवाइयां होती हैं, जिनमें इन चीजों का उपयोग नहीं किया जाता। और न जानवरों की ही घात की जाती है। हमारी देशी दवाइयां और होमियोपैथिक की औषधियाँ कुछ शुद्ध भी हैं। अतः बीमारी की हालत में भी ऐसी शुद्ध सात्विक दवाइयों का सेवन करना चाहिये या उपवासादि के लंघन से बीमारियों को मिटाना चाहिये।

ठंडी बासी रोटी जिसको तोड़ने पर तार निकलती हो, याने तात पड़ती हो अभक्ष्य है। बहुत दिनों की मिठाई भी अभक्ष्य हो जाती है। जब कि उस पर फूलन आजाती है और मिठाई के रस में खटास पैदा हो जाता है। इसी तरह सड़े गले फल और अनजाने पदार्थ भी अभक्ष्य समझने चाहिये।

१—अभक्ष्य किसे कहते हैं ?
२—अभक्ष्य पदार्थ के कुछ नाम बताओ।
३—औषधियां अभक्ष्य क्यों हैं ?

पाठ ७

श्रावक

सुभद्रा—शान्ति, क्या तुम बता सकती हो कि श्रावक किसे कहते हैं ?

शान्ति—जो श्रावक कुल में जन्म लेता है उसे श्रावक कहते हैं।

सुभद्रा—श्रावक कुल में जन्म लेने से ही कोई सच्चा श्रावक नहीं कहा जा सकता। सच्चा श्रावक यानी सच्चा गृहस्थ वही कहला सकता है, जिसमें निम्न लिखित गुण हों।

शान्ति—कौन २ से बहिन ?

सुभद्रा—सच्चे श्रावक को रात्रि भोजन का त्याग करना चाहिये, क्योंकि रात में भोजन करने से कई जीवों की हिंसा होती है। रात में हमें दिखाई भी अच्छी तरह से नहीं देता। इसलिये खाते समय कई जीव हमारे पेट में चले जाते हैं। जिससे कई तरह के रोग पैदा हो जाते हैं। जीव अगर जहरीला हुआ तो उससे कभी २ मृत्यु भी हो जाती है।

शान्ति—बहिन, अगर बिजली की तेज रोशनी में भोजन किया जाय तो क्या हानि है।

सुभद्रा—तुमने देखा होगा कि रोशनी के पास जीव ज्यादा आते हैं। इसमें तो और अधिक हिंसा होने की सभावना रहती है। रात को चूल्हा जलाते समय कई त्रस जीवों को जान बूझकर घात हो जाती है। भोजन भी ठीक तरह से हजम नहीं हो पाता। इसलिये श्रावक को धार्मिक दृष्टि से ही नहीं स्वास्थ्य की दृष्टि से भी रात्रि भोजन का अवश्य त्याग करना चाहिये।

दूसरी बात श्रावक के लिये यह है कि उसे पानी छान कर पीना चाहिये। क्योंकि यह बात तुम जान गई हो कि पानी में कई छोटे बड़े जीव होते हैं जो आखों से भी दिखाई पड़ते हैं। उनके पेट में चले जाने से कई बीमारियां खड़ी हो जाती हैं। हैजा और नेहरू जैसे भयकर रोग अनछाना पानी पीने से ही होते हैं। इसलिये श्रावक को दया पालने के लिए व शरीर को नीरोग रखने के लिये सदा पानी छानकर ही पीना चाहिये। इन दो बातों के साथ नीति दयालुता और विश्वास पालन का तो सदा ध्यान रखना ही चाहिये, लेकिन कुछ और गुण भी हैं, जिनका पालन करने से गृहस्थ सच्चा श्रावक कहला सकता है।

शान्ति—वे कौन से गुण हैं बहिन ?

सुभद्रा—१ धम पर दृढश्रद्धा २ जूआ, चोरी, मांस और मदिरा आदि दुर्व्यसनों का त्याग ३ सत्य ४ संतोष ५ सदाचार आदि

शान्ति—अगर तुम सच्ची श्राविका बनना चाहती हो तो तुम्हें भी इन बातों को अपने जीवन में उतारना होगा। तभी तुम सच्ची श्राविका कहला सकोगी।

१—श्रावक किसे कहते हैं।
२—श्राविका में कितने गुण होने चाहिये।
३—रात्रि भोजन से क्या हानि है ?



पाठ ८

तीन पुतलियां

किसी गांव में एक कारीगर रहता था। वह खिलौने बनाने में बड़ा चतुर था। एक दिन उसने तीन पुतलियां बनाई। जो रंग, रूप और लम्बाई, चौड़ाई में एक समान थी। उन पुतलियों को लेकर वह राज सभा में गया और उनको राजा के सम्मुख रख कर नीचे बैठ

गया। राजा ने कारीगर से पूछा इन पुतलियों की क्या क़िम्मत है? कारीगर ने उत्तर दिया, हुजूर! क़िम्मत ठहराने के लिये ही मैं इनको आपकी सेवा में लाया हूँ। अब आपही इनकी परीक्षा करावें और किसकी कितनी क़िम्मत है, फरमावें। राजा ने कहा क्या तीनों की क़िम्मत कम ज्यादा है। कारीगर ने कहा हुजूर! यह तो आप ही देख कर फरमावेंगे। राजा ने उन पुतलियों को अच्छी तरह से देखकर अपने राज दरबारियों से पूछा क्यों भाई! आप लोगों की क्या राय है। राज दरबारियों ने कहा महाराज! इनको तो तीनों पुतलियां समान नजर आती हैं, इसलिये इनकी क़िम्मत भी समान ही होनी चाहिये। राजा ने अपने मन्त्री से कहा, मन्त्रीजी! अब तुम्हारी परीक्षा है। कहो, तुम्हारी क्या राय है। मन्त्री ने कहा-महाराज! अगर आप मुझे अवकाश दें तो कल में इनको देखकर जवाब दूंगा। राजा ने कहा-स्वीकार किया। और कारीगर को कल आने के लिये कहा।

दूसरे दिन सुबह होते ही सब लोग राज दरबार में जमा हो गये। कारीगर और मन्त्री भी आ पहुँचे। राजा ने आते ही मन्त्री से पूछा मन्त्रीजी! क्या पुतलियों की परीक्षा करली। कहो क्या निर्णय किया है।

मन्त्री ने उत्तर दिया, महाराज! ये तीनों पुतलियाँ अपनी अलग २ विशेषता रखती हैं। मैंने तीनों पर नम्बर लगा दिए हैं। तदनुसार प्रथम नम्बर की पुतली सब से उत्तम है, क्योंकि उसके कान में भरी हुई फूंक (हवा) भी बाहिर नहीं निकलती है। दूसरे नम्बर की पुतली तुच्छ है, क्योंकि उसके कान की हवा मुंह से निकल जाती है। तीसरी तो बिल्कुल निकम्मी है, क्योंकि उसके कान की हवा एक कान से दूसरे कान में होकर निकल जाती है। यदि आपको शंका हो तो एक तार लेकर इनके कान में डालिए, आपको भी पर्णतया विश्वास हो जायगा। राजा ने वैसा ही किया। मन्त्री की बात सच निकली। राजा बहुत खुश हुआ। उसने कारीगर को सवा लाख रुपये इनाम दिए। सब लोग भी कारीगर की प्रशंसा करने लगे। राजा ने उन पुतलियों का दिखाते हुए अपने राज-दरबारियों से कहा-देखो, पहले नम्बर की पुतली सवा लाख रुपये की है। यह बताती है कि जो मनुष्य सुनकर किसी बात को हृदय में रखता है, वह सवा लाख का है। दूसरी पुतली कहती है कि जो मेरी तरह कान से सुनकर मुंह से निकाल देता है, उसको कीमत एक कौड़ी की रह जाती है। तीसरी पुतली यह बताती है कि जो एक कान से सुन-

कर दूसरे कान से निकाल देता है वह मेरी तरह फूटी कौड़ी का है। उसकी दुनिया में कोई किम्मत नहीं होती है। जो मनुष्य प्रथम पुतली के समान होता है, वही दुनिया में आदर सन्मान पाता है। इसलिये प्यारी कन्याओं! तुम भी अगर सुनी हुई शिक्षाओं को मनमें धारण करोगी तो संसार में तुम्हारा आदर होगा।

१—मन्त्री ने क्या परीक्षा की?
२—राजा ने क्या कहा?
३—तीसरी पुतली कैसी थी?

पाठ ६

सामायिक और उसकी महिमा

कन्याओं! क्या तुम सामायिक का स्वरूप और इसकी उपयोगिता जानती हो? यदि नहीं तो लो आज के पाठ में यही समझाये देती हूँ। यह सामायिक सबसे उच्च धार्मिक क्रिया है। आत्मा में सब जीवों के लिये समभाव को जागृत करना और बढ़ाना ही सामायिक का अर्थ है। कम से कम १ मुहूर्त का समय सामायिक

के लिये जरूरी माना गया है।

यह तो तुम जानती हो कि संसार के प्रपंच में व घर गृहस्थी के कामों में जुटे रहने से मन को शांति नहीं मिल पाती। इसलिये मानसिक शान्ति और आत्म कल्याण के लिये थोड़ा समय निकालना जरूरी हो जाता है, जिससे कि दिल को शान्ति मिल सके। सच्ची शान्ति सामायिक करने से ही मिल सकती है, क्योंकि सामायिक में मन, वचन और काया को पूरी तरह से अशान्त वातावरण से दूर रहने का मौका मिलता है।

सामायिक की महिमा अपार है। तुम जानती होगी कि आज कल बहुत से भाई बहिन सामायिक का महत्व न समझ कर केवल नाम की सामायिक करके इधर उधर की गप्पें मारने लग जाते हैं किन्तु ऐसा करने से उन्हें सामायिक में दोष लगता है। सामायिक में धर्म चर्चा के सिवाय किसी तरह की बात नहीं करनी चाहिये। इतने समय तक मन को एक दम स्थिर रखना प्रारम्भ में मुश्किल मालूम होता है लेकिन अभ्यास करते २ फिर यह आसान बन जाता है। मन को शान्त रखने के लिये माला द्वारा प्रभु का स्मरण करना बड़ा अच्छा साधन है। जब तुम माला फेर चुको

या माला से मन अस्थिर होने लगे तो फौरन प्रभु भजन या भावना मय स्तवन प्रारंभ कर दो। इससे आत्मा में तल्लीनता पैदा होगी। इसके बाद अपने सीखे हुये ज्ञान का मनन आरंभ कर दो। जिससे तुम अपने पुराने ज्ञान को ताजा रख सकोगी। फिर कुछ समय अवशेष रहे तो किसी नवीन धार्मिक पुस्तक का स्वाध्याय करो। इससे तुम्हारी ज्ञान वृद्धि हो सकेगी। इस प्रकार सम भाव बढ़ाने वाली सामग्रियों में मुख्य भावक भावना करना सामायिक है।

इसलिये प्यारी कन्याओ! यदि तुम श्राविका कहलाना चाहती हो तो सामायिक करना मत भूलो। इससे तुम्हारा जीवन पवित्र होगा।

१—सामायिक किसे कहते हैं?
२—सामायिक में क्या करना चाहिये?
३—सामायिक करने से क्या लाभ है?



पाठ १०

प्रतिक्रमण

सामायिक की तरह प्रतिक्रमण भी आत्म शुद्धि का एक मुख्य अंग है। प्रतिक्रमण के द्वारा आत्मा को

अशुभ भावों से हटा कर शुभ भावों की तरफ ले जाया जाता है। जान बूझ कर या अनजान में अपने द्वारा किये गये पापों की आलोचना करना और फिर से नहीं करने की प्रतिज्ञा करना प्रतिक्रमण कहलाता है। प्रतिक्रमण शब्द का छोटा सा अर्थ पीछे हटना भी होता है अर्थात् अपने पाप कर्मों से पीछे हटने को प्रतिक्रमण कहते हैं। प्रतिक्रमण दो बार किया जाता है। एक सुबह और एक शाम। सुबह जो प्रतिक्रमण किया जाता है, उसे राइसी यानी रात्रि सम्बन्धी–प्रतिक्रमण कहते हैं और जो शाम को सूर्यास्त के बाद किया जाता है उसे 'देवसी प्रतिक्रमण' यानी दिन सम्बन्धी प्रतिक्रमण कहते हैं। सुबह के प्रतिक्रमण में रात के पापों की आलोचना की जाती है और शाम के प्रतिक्रमण में दिन के पापों की।

प्रतिक्रमण के दो भेद होते हैं। एक द्रव्य प्रतिक्रमण और दूसरा भाव प्रतिक्रमण। अपने दोषों की पाठों से शब्द रूप आलोचना कर लेना और दोष शुद्धि का कुछ भी विचार नहीं करना द्रव्य प्रतिक्रमण कहलाता है। इससे आत्मा की शुद्धि नहीं होती किन्तु आत्म वंचना होती है। जैसे कुम्हार के बरतनों को बार-म्बार कंकरों द्वारा फोड़ कर माफी माँगना व्यर्थ है, वैसे

है। यह द्रव्य प्रतिक्रमण भी भाव-प्रतिक्रमण के बिना सारहीन होता है। प्रतिक्रमण में अपने दैनिक दोषों की आलोचना करना और फिर उन दोषों का दुबारा सेवन नहीं हो इसके लिये पूर्ण सचेत रहना भाव प्रतिक्रमण कहलाता है।

दोनों सन्ध्या अवश्य करने योग्य होने से प्रतिक्रमण को आवश्यक भी कहते हैं। इसके ६ प्रकार हैं जो सामायिक, चतुर्विंशति स्तव, वन्दना, प्रतिक्रमण, काउस्सग्ग (ध्यान) और पच्चक्खाण के नाम से कहे जाते हैं। इस तरह प्रति दिन शुद्ध भाव से जो इन छहों आवश्यकों की आराधना करता है वह पाप भार से हलका होकर शीघ्र ही संसार सागर को पार कर लेता है। इसके आचरण से कोई भी आत्मा अपने आपको निर्मल बना सकती है। इसलिये प्यारी कन्याओ। अगर तुम अभी से प्रतिक्रमण करने की आदत डालोगी तो तुम्हारी आत्मा भी निर्मल होकर महान् बन सकेगी और तुम्हें आगे जाकर बड़ी शान्ति मिलेगी।

१—प्रतिक्रमण किसे कहते हैं ?
२—वह कितने प्रकार का है ?
३—प्रतिक्रमण में कितने आवश्यक हैं ?

पाठ ११

सच्ची-श्रद्धा

आज नाग पंचमी है भाई ! चलो भाभी से नाग देवता की पूजा करने को कहें। सुशीला ने अपने भाई महावीर से कहा ।

महावीर ने कहा—हां, री बहिन, कल ब्राह्मण कह तो गया था । चलो, भाभी पूजा कर रही होगी । दोनों भाई बहिन दौड़कर भाभी के पास पहुँचे । भाभी रोज का काम कर रही थी। सुशीला ने कहा—भाभी ! क्या इस साल नाग देवता की पूजा नहीं होगी । गत साल तो पिताजी घर पर ही थे, उन्होंने बड़े ठाठ बाट से नाग देवता की पूजा की थी । लेकिन आज वे घर पर नहीं हैं तो तुम क्यों नहीं करती ?

भाभी विधवा थी । उसे न धन की चाह थी न लड़के लड़की की। अतः वह झूठे देवी देवताओं की माया में फँसने वाली नहीं थी । उसे तो अपने वीतराग भगवान पर ही श्रद्धा थी । उसने सुशीला से कहा—सुशीला ! मैं तो अपने हाथ से किसी की पूजा करती

नहीं हूँ। जा, तेरी अम्मा से कहना। अगर वह चाहे तो पूजा करले।

सुशीला ने कहा-नहा, अम्मा कैसे कर सकती हैं; मामी ? घर में जो वह हाल है, वही पूजा किया करते हैं। इसलिये तुम्हें ही करना होगी। लेकिन मामी ने पूजा नहीं की। सुशीला यह कह कर चली गई परन्तु सुशीला और महावीर की इच्छा पूरी नहीं हुई।

दिन ढल गया। सुशील और महावीर अपनी माता के पास उदास बैठे हुए थे। मामी घर में इधर उधर फिरकर अपना काम कर रही थी। सहसा एक काला नाग घर में आया और उसने मामी को काट खाया। मामी गिर पड़ी। सुशीला और महावीर दौड़कर अपने पड़ोसियों को बुला लाये। सब कहने लगे–देखो, नाग पंचमी के दिन पूजा नहीं करने का यह फल होता है। अब बचना न बचना तो भाग्य की बात है लेकिन झाड़ा देने वाले को तो बुला लाओ। यह सुनकर मामी ने कहा–भाई ! मैं मर भी जाऊँ तो कोई चिन्ता की बात नहीं है, किन्तु किसी नियमित दारू मांस खाने वाले का झाड़ा दिला कर मेरा धर्म नहीं बिगाड़ना। नहीं तो मैं तुमको अपना हितैषी नहीं दुश्मन समझूंगी। अगर

तुम मेरा भला चाहते हो तो मुझे वीतराग देव के नाम सुनाते रहो। यही मेरे लिये बड़ा शरण है। भाभी की बात सुनकर लोग जैसे आये थे वैसे चले गये। सब ने भाभी को मूर्ख समझा। किसी को उसके बचने की उम्मीद न रही। लेकिन भाभी ने ३ दिन के लिये अन्न जल का त्याग कर नवकार मत्र और भक्तामर का पाठ सुनना प्रारम्भ किया। लोगों का आना जाना बराबर बना रहा। भाभी तीन दिन तक नवकार मन्त्र का श्रवण करती रही। चौथे दिन भाभी बिल्कुल स्वस्थ हो गई। साप का जहर दूर हो गया। लोगों ने अपने मुह में अगुली दबाते हुए कहा–भाभी का अपने सच्चे देव पर दृढ़ विश्वास है। इसलिये इसकी जान रह गई। नहीं तो मर गई होती। सुशीला और महावीर के घर में फिर कभी नाग पचमी की पूजा नहीं हुई। वे भी अपनी भाभी की तरह अपने धर्म पर दृढ़ श्रद्धा वाले बन गये।

प्यारी कन्याओ! आज कल बहुत सी अनजान स्त्रियां इस तरह भैरू भवानी की पूजा किया करती हैं। वे समझती हैं, कि पूजा नहीं करेंगी तो कहीं देवी-देवता हमारा अनिष्ट कर देंगे। तुमने अभी जो यह कहानी पढ़ी है, यह एक घटी हुई सच्ची घटना है।

लोगों ने समझ लिया था कि नाग-पंचमी के दिन पूजा नहीं करने से ही भाभी को नाग देवता ने काटा है और अपना परचा दिया है। लेकिन भाभी अपने धर्म पर दृढ़ थी। वह जानती थी कि वीतराग परमात्मा का आश्रय ले लेने के बाद संसार के मिथ्या देवी-देवता किसी का कुछ नहीं बिगाड़ सकते हैं। उसे अपने इष्ट पर सच्ची श्रद्धा थी। इसलिये उसका बाल भी बांका नहीं हो सका।

प्यारी कन्याओं ! अगर तुम भी इसी तरह अपने वीतराग देव पर विश्वास रक्खोगी तो तुम्हारा भी कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

१—भाभी ने पूजा क्यों नहीं की ?
२—साप का जहर कैसे उतरा ?
३—इस पाठ से क्या शिक्षा मिलती है ?

पाठ १२

सामयिक सूत्र

ईर्यापथिक दोष शुद्धि

हे भगवन् ! मैं पथ संबंधी दोषों से हटना चाहता।
ही आज्ञा गुरुराज। हर्ष से शोधन अब उनका करता॥

जीव जन्तु हरितादि वनस्पति मिट्टी और सचित वारी।
कीड़ी नगरा काई त्रस थावर कुमा प्राणी को दुखकारी॥
एकेन्द्रिय दो तीन चार या पंचेन्द्रिय के जो धारी।
बाल वृद्ध दुर्बल मानव पशु पक्षी को यदि अविचारी॥
सम्मुख आते हनन किया या धूल आदि से दबा दिया।
पृथ्वी पर मसला या सब का, बुरी तरह सघात किया॥
सघट्टन, परिताप श्राम या, जीवन नाशक दु ख दिया।
स्थान भ्रष्ट किया उनको या जीवन धन से दूर किया॥
ये सब जीव मात्र को दुख कर क्रिया हुई जो ज्ञाताज्ञात।
मन, वच, काय नम्र हो चाहू, निष्फल दुष्कृत मम तात॥



कायोत्सर्ग की प्रतिज्ञा

आलोचित पातक के शोधन, हित मैं कायोत्सर्ग करूँ।
शल्य हटा कर पाप-कर्म नाशन हित कायोत्सर्ग करूँ॥
श्वासोच्छ्वास श्वास या छिंक१, जमाई२ का आ जाना।
अधो वायु डकार भवरि या पित्त से मूर्छित हो जाना॥
सूक्ष्म रूप से अंग संचालन स्वाभाविक जो होता है।
जैसे मुख में सूक्ष्म रूप से खेल३ चलाचल करता है॥
अस्थिर शारीरिक बल से, पलकों का गिरना या हिलना।
इत्यादिक कारण से तन में सूक्ष्म क्रिया का हो जाना॥

अथवा पराधीन तन हान से जो देह क्रिया होती।
इन सब के आगार४ सहित मम भग नहीं होवे वृत्ति॥
जब तक कायोत्सर्ग अराधित५ स्थिर तन मन वाणी धारूँ।
देहासक्ति६ छोड़ के समरस आत्म रमणता प्राप्त करूँ॥
वीतराग निर्दोष महात्माओं का मन में ध्यान धरूँ।

पाठ १३

सामायिक का मूल्य

एक समय मगध सम्राट् श्रेणिक ने श्रमण भगवान महावीर से अपने अगले जन्म की बाबत पूछा कि 'मैं मर कर कहां जाऊँगा?' भगवान् ने कहा—'पहली नरक में।' श्रेणिक ने कहा—'आपका भक्त और नरक में? आश्चर्य है! भगवान ने कहा—'राजन्! किये हुए कर्मों का फल तो भोगना ही पडता है, इसमें आश्चर्य क्या?' राजा श्रेणिक ने बड़े ही आग्रह से नरक से बचने का उपाय पूछा तो भगवान ने चार उपाय बताए। जिनमें से किसी एक भी उपाय का अवलम्बन करने से

१छींक २उबासी ३भूक ४छूट ५आधाररहित ६शरीर से मोह

नरक से बचा जा सकता था। उसमें एकउपाय था "उस समय के सुप्रसिद्ध साधक पूनिया श्रावक की सामायिक को खरीदना भी था।

चारों उपायों में पूनिया श्रावक की सामायिक का खरीदना ही सब से सुलभ उपाय समझ महाराजा श्रेणिक पूनिया के पास पहुँचे और बोले कि, 'सेठ तुम मुझ से इच्छानुसार धन ले लो और उसके बदले में मुझे अपनी एक सामायिक दे दो, मैं नरक से बच जाऊँगा।' राजा के उक्त कथन के उत्तर में पूनिया श्रावक ने कहा—कि, 'महाराज! मैं नहीं जानता, सामायिक का क्या मूल्य है? अतएव जिन्होंने आपको मेरी सामायिक लेना बताया है, आप उन्हीं से सामायिक का मूल्य भी जान लीजिए।'

राजा श्रेणिक फिर भगवान महावीर की सेवा में उपस्थित हुआ और भगवान के चरणों में निवेदन किया कि—'भगवन्! पूनिया श्रावक के पास मैं गया था। वह सामायिक देने को तैयार है, परन्तु उसे पता नहीं कि सामायिक का क्या मूल्य है? अतः भगवन्! आप कृपा करके सामायिक का मूल्य बता दीजिए।' भगवान् ने कहा—'राजन्! तुम्हारे पास क्या इतना

सोना और जवाहरात है कि जिसको थैलियों का ढेर सूर्य और चाँद के तख्ते को छू जाय ? कल्पना करो कि इतना धन तुम्हारे पास हो तो भी वह सामायिक की मेरी दलाली के लिए भी पूर्ण नहीं होगा। फिर सामायिक का मूल्य तो कहाँ से दोगे ?" भगवान का यह कथन सुन कर राजा श्रेणिक चुप हो गया।

उपरोक्त घटना बता रही है कि सामायिक का एक मात्र मूल्य मोक्ष है, मोक्ष के अतिरिक्त कुछ नहीं। इसके वास्तविक फल के सामने संसार की सभी भौतिक संपदायें तुच्छ हैं। भले ये कितनी ही और कैसी भी अच्छी क्यों न हों। इसलिए कन्याओं ! तुम्हें भी सामायिक का सच्चा मूल्य समझ कर शुद्ध भाव से इसका आराधन करना चाहिये।

१—श्रेणिक को नरक से बचने का क्या उपाय बताया गया था ?

२—सामायिक का वास्तविक मूल्य क्या है ?

पाठ १४

मेरी भावना

१

जिसने राग द्वेष कामादिक जीते, सब जग जान लिया ।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया ।
बुद्ध वीर, जिन हरि, हर, ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो ।
भक्ति भाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी में लीन रहो ।

२

विषयों की आशा नहीं जिनको, साम्यभाव धन रखते हैं ।
निज पर के हित साधन में जो, निश दिन तत्पर रहते हैं ।
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं ।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुख समूह को हरते हैं ।

३

रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे ।
उनही जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे ।
नहीं सताऊं किसी जीव को, झूठ कभी नहीं कहा करूं ।
बने जहां तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूं ।

४

मैत्री भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे ।
दीन दुखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा स्रोत बहे ।

दुर्जन क्रूर कुमार्ग-रतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे।
साम्यभाव रक्खूँ मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे।

६

गुणी जनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहाँ तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे।
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे।
गुण ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे।

कठिन शब्दार्थ—निस्पृह=तृष्णा रहित
प्रेरित हो=प्रेरणा पाकर
अनुरक्त=लगा हुआ, तत्पर
करुणा=दया, क्रूर=निष्ठुर, पापी
क्षोभ=दुःख, घृणा, द्रोह=शत्रुता
जिन=राग द्वेष को जीतने वाले
तत्पर=उद्यत, तैयार, स्रोत=झरना
कुमार्गरत=खराब मार्ग पर चलने वाले
कृतघ्न=उपकार को भूलने वाला
उर=हृदय

पाठ १५

पुण्य-पाप

कमला—विमला! क्या तुम बता सकती हो कि पुण्य और पाप किसे कहते हैं।

विमला—जिस काम को करने से प्राणी भविष्य में सुख पाता है और जगत में भी प्रशंसा प्राप्त करता है उसको पुण्य कर्म कहते हैं और जिसके करने से जगत में अपयश फैलता है तथा भविष्य में भी दुःख उठाना पड़ता है उसको पाप कर्म कहते हैं।

कमला—ठीक है विमला, लेकिन क्या तुम यह भी जानती हो कि पुण्य कितनी तरह से बंधता है?

विमला—यह तो मैं नहीं जानती बहिन! आप ही बताइये।

कमला—पुण्य कर्म का बन्ध नौ प्रकार से किया जा सकता है।

जैसे कि —

१ अन्नपुण्य– खाने के लिये अन्न देना।
२ पान पुण्य– पीने के लिये पानी देना।

३ लयनपुण्य— रहने के लिये स्थान देना ।
४ शयनपुण्य— सोने, बैठने के लिये शय्या देना ।
५ वस्त्रपुण्य— पहिनने के लिये वस्त्र देना ।
६ मनपुण्य— मन से शुभ विचार करना ।
७ वचनपुण्य— मधुर और शुभ वाणी बोलना ।
८ कायपुण्य— शरीर से शुभ कर्म करना ।
९ नमस्कार पुण्य— आदरणीय पुरुषों को नमस्कार करना ।

विमला—बहिन ! पाप बंधने के कौन २ से कारण हैं कि जिनसे जीव इस लोक और पर लोक में दुख पाता है ?

कमला—बहिन ! जीव १८ प्रकार के कारणों से पाप-कर्म बांधता है । वे इस प्रकार हैं —

१ प्राणातिपात— जीव हिंसा करना
२ मृषावाद— झूठ बोलना
३ अदत्तादान— चोरी करना
४ मैथुन— विषय वासना करना
५ परिग्रह— धनधान्य आदि का अधिक संग्रह करना
६ क्रोध— गुस्सा करना ७ मान— घमंड करना

८ माया—कपट करना ९ लोभ—लालच करना
१० राग—प्रेम करना ११ द्वेष—शत्रुता रखना
१२ कलह—क्लेश करना
१३ अभ्याख्यान—दूसरों पर झूठे दोष लगाना
१४ पैशुन्य—दूसरों की चुगली करना
१५ पर परिवाद—दूसरों की निंदा करना
१६ रति अरति—किसी वस्तु को देखकर प्रसन्न होना और किसी को देखकर नाराज होना
१७ माया मोसा—कपट सहित झूठ बोलना
१८ मिथ्या दर्शनशल्य—जिनेश्वर भगवान के मार्ग के सिवाय अन्य मिथ्या धर्म में श्रद्धा रखना।

इस प्रकार जीवन को उत्तम बनाने के लिये इन १८ पाप स्थानों से दूर होना चाहिये और उपरोक्त ९ प्रकार के पुण्य कार्यों को ग्रहण करना चाहिये।

१—पुण्य किसे कहते हैं?
२—ये कितनी तरह से बाँधे जाते हैं?
३—पाप का बन्ध कितनी तरह से होता है? नाम बताओ।
४—निम्न लिखित के अर्थ बताओ—
पाप पुण्य, प्राणातिपात, अभ्याख्यान, पैशुन्य, मिथ्या दर्शन शल्य।

पाठ १७

साधुजी के पांच महाव्रत

व्रतों से जो बड़े होते हैं, उन्हें महाव्रत कहते हैं। श्रावक अपने व्रतों का एक देश में पालन करता है, पर साधुओं को अपने महाव्रतों का पूर्ण रूप में पालन करना पड़ता है। उनके महाव्रत पांच बताये गये हैं। जो इस प्रकार हैं—

१ सर्वथा हिंसा का त्याग करना—मन, वचन और काया से एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक किसी भी प्राणी को नहीं सताना।

२ सर्वथा झूठ का त्याग करना—मरणान्त कष्ट आने पर भी सत्य को नहीं छोड़ना।

३ सर्वथा चोरी का त्याग करना—किसी भी चीज को बिना आज्ञा नहीं उठाना।

४ सर्वथा मैथुन का त्याग करना—किसी भी प्रकार का मैथुन सेवन नहीं करना। पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना।

५ सर्वथा परिग्रह का त्याग करना—किसी भी वस्तु पर ममत्व नहीं रखना। जीवन निर्वाह व संयम

पालन की अत्यावश्यक चीजों के सिवाय किसी भी वस्तु का अपने पास संग्रह नहीं करना। साधु के प्रत्येक व्रत त्रिकरण नियोग से होता है।

१—महाव्रत किसे कहते हैं?
२—वे कितने हैं? उनके नाम अर्थ पूर्वक बताओ।

पाठ १८

बड़ी कौन ?

एक बार दया और लक्ष्मी में झगड़ा हो गया। दया ने कहा—मैं जीवों को तुमसे अधिक प्यार करती हूँ। लक्ष्मी ने कहा—नहीं, मैं ज्यादा प्यार करती हूं। न लक्ष्मी हार मानने को तैयार थी, न दया। आखिर दोनों अपना निर्णय कराने के लिये देवलोक के राजा इन्द्र के पास पहुंची।

दोनों की बातें सुनकर इन्द्र ने कहा—तुम दोनों दुनिया में जाकर रहो। वहां आकर मैं तुम्हारी परीक्षा लूंगा।

इन्द्र की आज्ञा पाकर दोनों स्वर्ग लोक से उतर कर पृथ्वी पर आ गईं। यह तो तुम जानती हो कि लक्ष्मी को धन सौन्दर्य बहुत प्यारा है और दया गरीबों के यहां ज्यादा मिलती है। इसलिये लक्ष्मी एक सेठ के घर में गई और दया एक गरीब किसान के घर में।

कुछ दिन बाद एक गरीब भिखारी उन सेठजी के दरवाजे पर भीख मांगने आया और बोला—माता, कुछ खाने को दे मैं बहुत भूखा हूँ। सेठानी ने कहा—जाओ, यहां कुछ नहीं मिलेगा। बूढ़े ने फिर गिड़-गिड़ाकर कहा मां, एक रोटी दे दो, कई दिनों से कुछ खाया नहीं है। भगवान तुम्हारा भला करेंगे। लेकिन सेठानी को इस पर भी दया नहीं आई। वह गरज कर बोली—अरे कोई है? निकालो इस बूढ़े को। यहां आकर टर टर करता है।

बूढ़ा निराश हो आगे बढ़ा। वह लाठी टेकता हुआ किसान के घर पहुँचा और कुछ खाने को मांगा। किसान की स्त्री को उसे देखकर दया आ गई। उसने उसको बिठाया और पूछा—बाबा, तुम कहां के रहने वाले हो? क्या तुम्हारे घर में तुम्हारी देख रेख करने वाला कोई नहीं है?

बूढ़े ने कहा—हैं क्यों नहीं? मेरे बहुत से बाल बच्चे हैं। लेकिन बच्चों की गति विचित्र है। घर २ मांग कर पेट भरना पड़ता है। वे मेरी परवाह नहीं करते।

किसान की स्त्री के पास जो रूखा सूखा भोजन था बड़े प्रेम से उसे खिलाया और रात भर बड़े आराम से उसे अपने घर में रक्खा।

दूसरे दिन सबेरे किसान की स्त्री ने देखा तो बूढ़ा कहीं नज़र नहीं आया। न जाने वह कब चला गया था।

परीक्षा समाप्त हो गई। लक्ष्मी और दया इन्द्र के आसन उपस्थित हुईं। अब उनको मालूम हुआ कि वह बूढ़ा आदमी महाराज इन्द्र के सिवाय दूसरा कोई नहीं था। यह जान कर लक्ष्मी का सिर लज्जा से नीचा हो गया। वह समझ गई कि दया बड़ी है।

१—लक्ष्मी बड़ी है या दया?
२—इन्द्र ने कैसे परीक्षा ली?
३—तुम किसे चाहती हो?

पाठ १६

श्रावक के मूल व्रत

जैन शास्त्र में गृहस्थ श्रावक के लिये बारह व्रतों का विधान किया गया है। उनमें ५ अणुव्रत होते हैं। अणु का अर्थ है छोटा और 'व्रत' का अर्थ है प्रतिज्ञा। साधुओं के महाव्रतों की अपेक्षा गृहस्थों के हिंसा आदि त्याग की प्रतिज्ञा मर्यादित छोटी होती है, अतः वह अणुव्रत है। तीन गुणव्रत होते हैं। गुण का अर्थ है विशेषता। जो नियम पांच अणुव्रतों में विशेषता उत्पन्न करते हों, अणुव्रतों के पालन में सहायक एवं उपकारी हों उनको गुणव्रत कहते हैं। चार शिक्षाव्रत हैं। शिक्षा का अर्थ अभ्यास करना है। जिनके द्वारा धर्म की शिक्षा ली जाय, धर्म का अभ्यास किया जाय, उन प्रति दिन अभ्यास करने योग्य नियमों को शिक्षाव्रत कहते हैं।

५ अणुव्रत

१ स्थूल हिंसा का त्याग—बिना किसी अपराध के व्यर्थ ही मारने के विचार से, प्राण नाश के संकल्प से किसी जीव को नहीं मारना श्रावक का प्रथम अणुव्रत है। गृहस्थ जीवन में अपराध

वाले और सूक्ष्म जीवों की हिंसा का त्याग अशक्य होने से नहीं होता।

२ स्थूल असत्य का त्याग—दूसरों के जान माल की हानि हो, जिससे दूसरों को कष्ट हो ऐसे स्थूल झूठ का त्याग गृहस्थ का दूसरा व्रत है।

३ स्थूल चोरी का त्याग—चोरी करने के सकल्प से बिना आज्ञा किसी की वस्तु को उठा लेना चोरी है। जैसे किसी के घर में सांध देना, दूसरी ताली लगाकर ताला खोलना, धरोहर मारना, आदि स्थूल चोरी का त्याग तीसरा अणुव्रत है।

४ व्यभिचार का त्याग—अपने विवाहित स्त्री पुरुषों को छोड़कर अन्य किसी स्त्री पुरुषों से अनुचित सम्बन्ध नहीं करना और सदाचार का पालन करना गृहस्थ का चतुर्थव्रत है।

५ इच्छा परिमाण—धन, धान्य, सोना, चांदी, भूमि और पशु आदि जितने भी पदार्थ हैं अपनी आवश्यकतानुसार उनकी एक निश्चित मर्यादा कर लेना और आवश्यकता या मर्यादा से अधिक सग्रह नहीं करना पांचवा अणुव्रत है। जैसे एक सैनिक के लिये फौजी नियमों का

पालन आवश्यक है, उसी प्रकार जैन गृहस्थ-श्रावक, श्राविका के लिये भी इन पांच मूलव्रतों का पालन करना जरूरी है। किसी भी कुल या जाति का व्यक्ति विवेक पूर्वक उपरोक्त व्रतों का पालन करने से श्रावक कहला सकता है।

१—व्रतों के कितने विभाग हैं ?
२—अणुव्रत का क्या अर्थ और उसके कितने प्रकार हैं ?
३—प्रथम और पंचम अणुव्रत का स्वरूप कहो ?

पाठ २०

आत्मा (तत्व ज्ञान)

कमला—विमला ? क्या तुम जानती हो कि आत्मा सब की एक समान है ?

विमला—सब की आत्मा एक समान कैसे हो सकती है, कमला बहिन ? मुझे तो मेरी आत्मा में और आपकी आत्मा में ही बहुत फर्क दिखाई दे रहा है।

कमला—क्या फर्क है ? बताओ तो।

विमला—मेरे जैसे हाथ पांव हैं वैसे आपके नहीं हैं। मुँह और नाक भी वैसा नहीं है। यह फर्क नहीं तो क्या है ?

कमला—यह आत्मा का फर्क नहीं है विमला, यह तो शरीर का फर्क है। आत्मा शरीर से अलग एक दूसरी चीज है। जो सब प्राणियों में एक समान है। तुमने देखा होगा कि जब एक प्राणी मर जाता है तो उसका शरीर निर्जीव हो जाता है। फिर उसको सुख दुख कुछ नहीं मालूम होता है। लेकिन हाथ पांव और आंख नाक तो वैसे ही रहते हैं। उनमें तो कोई अन्तर नहीं आता। लेकिन फिर भी उनका काम बन्द हो जाता है। क्योंकि उस शरीर से आत्मा अलग हो गई है। जब तक वह (आत्मा) शरीर में रहती है तब तक शरीर चलता फिरता है। लेकिन जब वह शरीर को छोड़ देती है, तब यह शरीर मर जाता है। इस तरह अब तुम समझ गई होगी कि आत्मा और शरीर एक नहीं अलग अलग है और आत्मा के अभाव में शरीर मरता है। आत्मा कभी मरती नहीं है। वह हर काल एक सी रहती है।

विमला—आप ठीक कहती हैं, कमला बहिन ! मैं तो अभी तक अपने शरीर को ही आत्मा समझ रही थी। लेकिन आज मालूम हुआ कि मेरा यह समझना गलत था। दरअसल आत्मा शरीर से स्वतन्त्र चीज है। लेकिन एक बात अभी तक मुझे समझ नहीं आई है।

कमला—क्या बात समझ में नहीं आई है विमला ?

विमला—अगर आत्मा सब प्राणियों में एक समान है तो फिर वह हाथी के शरीर में बड़ी और चींटी के शरीर में छोटी कैसे हो जाती है।

कमला—यह भी अच्छा प्रश्न पूछा विमला ! इसे जान लेना भी जरूरी है। अच्छा, जब तुम रात को अपने कमरे में सोती हो तो क्या तुम दीपक जलाकर सोती हो।

विमला—मुझे अन्धेरे में डर लगता है कमला बहिन इसलिए दीपक तो जलाती ही हूँ।

कमला—क्या तुम यह भी बता सकती हो कि उस दीपक का प्रकाश कहाँ तक रहता है।

विमला—मेरे सारे कमरे में उसका प्रकाश रहता है।

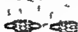
कमला—यदि उस पर बरतन ढाक दिया जाय तो फिर क्या उसका प्रकाश सारे कमरे में रह सकेगा।

विमला–नहीं।

कमला–ठीक इसी तरह यह शरीर एक बरतन है और आत्मा एक दीपक की तरह है। वह जिस शरीर में प्रविष्ट होती है, दीपक के प्रकाश की तरह उसी शरीर में समा जाती है। जिस तरह दीपक पर से बरतन उठा लेने पर उसकी रोशनी सारे कमरे में फैल जाती है, उसी तरह आत्मा भी चींटी के शरीर से निकल कर हाथी के बड़े शरीर में समा जाती है और फिर जिस तरह बरतन रख देने से दीपक की रोशनी बरतन में ही बन्द हो जाती है, उसी तरह हाथी की आत्मा भी चींटी के शरीर में बन्द हो जाती है।

इस प्रकार छोटे बड़े शरीर के अनुसार आत्मा भी छोटी बड़ी दिखाई देती है।

१—आत्मा और शरीर अलग २ कैसे हैं?
२—आत्मा मरती है या नहीं?
३—आत्मा छोटा बड़ा शरीर कैसे धारण करती है।



पाठ २१

कर्म और उसके प्रकार (४)

विमला—बहिन, कल आपने यह बताया था कि सबकी आत्मा एक समान है। लेकिन मुझे यह समझ में नहीं आया कि जब सब की आत्मा एक समान है तो एक सुखी और दूसरा दुखी क्यों दिखाई देता है?

कमला—यह सब कर्म का प्रभाव है, विमला। आत्मा जैसे २ कर्म करती है, उसी के अनुसार उसे फल भी भोगने पड़ते हैं। अच्छे बुरे कर्म के प्रभाव से ही आत्मा को सुख दुख भोगने पड़ते हैं। अच्छे कर्म करने से आत्मा को सद्गति और सुख प्राप्त होते हैं, तथा बुरे कर्म करने से दुर्गति और दुःख उठाने पड़ते हैं।

विमला—कर्म किसे कहते हैं, कमला बहिन?

कमला—जिनके द्वारा जीवों को संसार में भटकना पड़ता है और जिनसे जीव अपने शुद्ध स्वरूप को नहीं पा सके उन्हें कर्म कहते हैं। क्या तुम जानती हो कि कर्म कितने हैं।

विमला—नहीं बहिन! आप ही बताइये वे कितने और कौन २ से हैं।

कमला—कर्म आठ हैं, १ ज्ञानावरणीय २ दर्शनावरणीय ३ वेदनीय ४ मोहनीय ५ आयुष्य ६ नाम ७ गोत्र और ८ अन्तराय।

विमला—बहिन ! इनका क्या मतलब है ?

कमला—विमला, आवरण का मतलब है परदा। जैसे किसी चीज के आगे परदा कर दिया जाय तो वह परदा उस चीज को ढक लेता है, उसी प्रकार जो आत्मा के अनन्त ज्ञान को ढाँके उसे ज्ञानावरणीय कर्म कहते हैं। जैसे तुम अपना पाठ खूब याद करो, लेकिन फिर भी वह याद नहीं हो तो इसका कारण ज्ञानावरणीय कर्म का उदय समझना चाहिए। यह कर्म झूठा उपदेश देने से, ज्ञान की या ज्ञानी पुरुषों की निन्दा करने से तथा अपनी विद्या का घमंड करने से बंधता है। इसके विपरीत आचरण करने से आत्मा का ज्ञान गुण प्रकट होता है।

विमला—दर्शनावरणीय कर्म किसे कहते हैं ?

कमला—जो आत्मा के दर्शन गुण को प्रकट न होने दे उसे दर्शनावरणीय कर्म कहते हैं। जैसे एक राजा का पहरेदार किसी को अन्दर जाकर राजा के दर्शन नहीं करने देता है, सब को बाहर से ही रोक देता है। उसी प्रकार दर्शनावरणीय कर्म आत्मा के दर्शन

गुण को प्रगट नहीं होने देता है। बैठे २ नींद आना, आंखें कमजोर हो जाना या अंधा हो जाना इसी कर्म के फल हैं। यह कर्म किसी की आंखें फोड देने से, अपने पास रही हुई वस्तु को नहीं दिखाने से या मुनियों की ग्लानि करने से बंधता है। इसके विपरीत आचरणों से आत्मा का दर्शन गुण प्रगट होता है।

विमला—वेदनीय कर्म किसे कहते हैं ?

कमला—जिस कर्म के उदय से आत्मा सुख और दुख का अनुभव करे उसे वेदनीय कर्म कहते हैं। जैसे शहद भरी तलवार की धार को चाटने से सुख और दुख यानी शहद के मिठास से सुख और जीभ के कट जाने से दुख, दोनों ही होते हैं। इसी प्रकार वेदनीय कर्म दोनों का अनुभव कराता है। जब सुख का अनुभव हो तो सातावेदनीय और दुख का अनुभव हो तो असातावेदनीय समझना चाहिये। असातावेदनीय का बंध दूसरे को दुःख देने से, रुलाने से किसी को मारने से होता है। इसके विपरीत दया करने से, संताप मिटाने आदि से सातावेदनीय कर्म का बंध होता है।

विमला—अब यह बताये कि मोहनीय कर्म किसे कहते हैं और वह कैसे बंधता है ?

कमला—जिस कर्म के उदय से आत्मा अपने को भूल जाय उसे मोहनीय कर्म कहते हैं। जैसे शराब पीने वाला शराब पीकर अपने को भूल जाता है, फिर उसे अच्छे बुरे का कुछ भी ध्यान नहीं रहता है। इसी प्रकार मोहनीय कर्म के उदय से भी आत्मा को हिताहित का ज्ञान नहीं होता है। काम, क्रोध, मान, माया, लोभ आदि मोहनीय कर्म के उदय के ही रूप होते हैं। जैसे, कि-सुभद्रा ने क्रोध में आकर शान्ति को पीटा और उसकी किताबें लेली। इससे समझना चाहिये कि सुभद्रा को मोहनीय कर्म का उदय है। यह कर्म देव, गुरु और धर्म पर दोष लगाने से व काम, क्रोध, मान, माया, लोभ वगैरह करने से बंधता है। इसके विपरीत क्षमा, विनय, सरलता और सन्तोष से उसका क्षय होता है।

१—कर्म कितने हैं। कौन २ से हैं?

२—मोहनीय कर्म किसे कहते हैं?

३—ज्ञानावरणीय कर्म कैसे बंधता है?



पाठ २२

कर्म और उसके प्रकार (२)

विमला—अच्छा बहिन, चार कर्म तो आपने समझा दिये, अब यह बताइये कि आयु कर्म किसे कहते हैं ?

कमला—जिस कर्म के उदयसे आत्मा नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव के शरीरों में से किसी एक शरीर में रुका रहे उसे आयु कर्म कहते हैं। इस कर्म के प्रभाव से आत्मा चारों गतियों में भ्रमण करता हुआ काल व्यतीत करता है। जैसे तुम्हारी आत्मा मनुष्य शरीर में रुकी हुई है और हाथी की आत्मा तिर्यञ्च शरीर में रुकी हुई है तो यह आयु कर्म का उदय ही समझना चाहिए। इस कर्म का बंध चार प्रकार से होता है जैसे कि— १ बड़ी हिंसा के काम करने से व मदिरा मांस का सेवन करने से जीव नरक गतिका आयु बांधता है। २ छल कपट करने से तिर्यञ्च होता है। ३ विनय, सरलता और दयालुता आदि से जीव मनुष्य बनता है और ४ देव आयु का बंध होता है मुनिधर्म, श्रावकधर्म एवं तपस्या की साधना करने से।

विमला—नाम कर्म किसे कहते हैं ?

जिस कर्म के उदय से जीव को छोटी बड़ी तरह तरह की आकृतियां धारण करनी पड़े उसे नाम कर्म कहते हैं। जैसे चित्रकार मनुष्य, हाथी, स्त्री, बैल, घोड़ा, ऊंट, आदि तरह २ के चित्र बनाता है। जैसे कि—सुन्दर रूप वाला, कुरूप, लम्बा, छोटा, बड़, मीठी आवाज वाला, मोटी आवाज वाला, अंधा, बहरा, लूला, लंगड़ा आदि। हमारा शरीर, आंख, नाक, कान, मुंह आदि सब नाम कर्म के प्रभाव से ही बने हुए हैं। यह कर्म दो तरह का है। शुभ नाम कर्म और अशुभ नाम कर्म। अगर हाथ, पांव, आंख, नाक, कान आदि सुन्दर हैं और आवाज भी मधुर है तो यह शुभ नाम कम का उदय समझना चाहिये। जिनका शरीर ठीक नहीं हो, उसमें रक्त विकार या कोढ़ हो, अधिक लम्बा या छोटा हो आवाज मोटी हो, बदसूरत हो तो उनके अशुभनाम कम का उदय समझना चाहिये। यह कर्म लड़ने से, शरीर के द्वारा बुरे काम करने और बुरे बोलने से तथा दूसरे का बुरा सोचने से बंधता है। इससे विपरीत अच्छा काम करने से, और सबका भला चाहने से शुभ नाम कम बंधता है।

विमला—गोत्र कम किसे कहते हैं, बहिन?

कमला—जिस कर्म के उदय से जीव ऊँच नीच

कुल में पैदा हो उसे गोत्र कर्म कहते हैं। जैसे कुम्हार छोटे बड़े सब तरह के बरतन बनाता है, उसी प्रकार गोत्रकर्म भी जीव को ऊंचा नीचा बना देता है। उच्च गोत्र कर्म के उदय से जीव उच्च कुल में पैदा होता है और नीच गोत्र कर्म के उदय से नीच कुल में। अपनी जाति, कुल, विद्या और रूप आदि का गर्व करने से तथा दूसरों की घृणा करने और देव गुरु की आशातना करने से इस कर्म का बंध होता है। इसके विपरीत आचरणों से उच्च गोत्र का बंध होता है।

विमला—अब अन्तराय कर्म और उसके बंध का कारण बताइये ?

कमला—जिस कर्म के उदय से किसी कार्य में विघ्न बाधा आजाय उसे अन्तराय कर्म कहते हैं। जैसे कि किसी राजा ने किसी आदमी को सौ रुपये इनाम देने की आज्ञा दी, किन्तु खजाञ्ची ने उसे देने में बाधा उत्पन्न करदी। जिस तरह उस आदमी को रुपये मिलने में खजाञ्ची साहब बाधक हो गये, यहां पर उस मनुष्य के अन्तराय कर्म का उदय समझना चाहिये। जैसा कि कल तुमने कहा था—शान्ति रोटी खा रही थी और अकस्मात् उन्दर आकर उसकी रोटी छीन ले गया तो यह शान्ति के अन्तराय कर्म का उदय समझना

चाहिये। अब बताओ तुम ठीक तरह से समझ गई हो कि नहीं?

विमला—हां बहिन, आठ कर्मों के विषय में तो मैं पूरी तरह से समझ गई हूं।

कमला—अच्छा एक बात और याद रखने की है विमला। वह यह कि इन आठ कर्मों में १ ज्ञानावरणीय २ दर्शनावरणीय ३ मोहनीय और ४ अंतराय ये चार घातिक कर्म कहे जाते हैं। शेष चार अघातिक कर्म कहलाते हैं। जो कर्म आत्मा के ज्ञान, दर्शन आदि मूल गुणों का घात करते हैं, उन्हें घातिक कर्म कहते हैं पर जो कर्म आत्मा के ज्ञान, दर्शन आदि मूल गुणों का घात नहीं करते उन्हें अघातिक कर्म कहते हैं।

१—अघातिक कर्म किसे कहते हैं? वे कौन २ हैं?
२—अरिहन्तों के कितने कर्म हैं?
३—अन्तराय कर्म का स्वरूप बताओ?

— ✽ —

पाठ २३

सती राजेमती

प्यारी कन्याओं ! क्या तुमने सती राजेमती का नाम सुना है ? वह महाराजा उग्रसेन की कन्या थी। राजेमती सती सुलभ, सर्व गुण सम्पन्न राजकुमारी थी। उसकी सौम्यता और सुन्दरता को देखकर श्री कृष्ण ने अपने चचेरे भाई नेमिनाथ के साथ उसका सम्बन्ध कर दिया था। कुमार नेमिनाथ जिनका दूसरा नाम अरिष्ट नेमि है, महाराजा समुद्र विजय के पुत्र थे। वे बचपन से ही शूरवीर एवं संसार कार्य में उदासीन थे। उनकी इच्छा विवाह करने की नहीं थी। परन्तु श्री कृष्ण महाराज की आग्रह भरी बात स्वीकार कर वे चुप रहे।

कुछ दिन बीते। दोनों तरफ विवाह की तैयारियां होने लगीं। बड़े ठाट बाट से अरिष्ट नेमि की बरात विवाह के लिए रवाना हो गयी। श्री कृष्ण महाराज इस बरात के मुखिया थे। कुमार अरिष्टनेमि जब तोरण के पास आये, तो उन्होंने एक बाड़े में पशुओं को बन्द किये हुए देखे। जो कि बड़े जोर से शोर कर रहे थे। उनकी करुण पुकार को सुनकर नेमि कुमार ने अपने सारथी

से पूछा सारथी ! ये प्राणी यहां क्यों बन्द किये गये हैं ? सारथी ने कहा प्रभो ! बरात में आये हुए मेहमानों के लिए ये प्राणी इकट्ठे किये गये हैं। अतः भयभीत हो चिल्ला रहे हैं। अरिष्ट नेमि ने कहा—क्या मेरे विवाह में यह घोर हिंसा की जायगी ? बेचारे निर्दोष मूक प्राणियों को मारा जायगा। समझदार के लिए इशारा ही काफी होता है। क्षण मात्र में अरिष्ट नेमि की आंखों के सामने दुनिया के क्षणिक राग रंग चित्रपट की तरह एक के बाद एक उपस्थित हो गये। फिर क्या था, जो शरीर अभी अभी विवाह की खुशी में आभूषणों से अलंकृत था, देखते ही देखते वह भूषण रहित सादा हो गया। कुमार अरिष्ट नेमि पशुओं को छुड़ाकर संयम लेने को तत्पर हो गये। राजकुमार का यह आकस्मिक परिवर्तन सबको आश्चर्य जनक प्रतीत हुआ। श्रीकृष्ण ने उन्हें कई तरह से समझाया लेकिन कुमार पर किसी का कुछ असर नहीं हुआ। वे अपने विचार पर दृढ़ रहे और सांसारिक वैभव विलासों को ठोकर मारकर मुनि बनने को निकल गये।

जब ये समाचार राजमती के कानों में पहुंचे तो वह सुनते ही अचेत हो गयी। माता, पिता, दास दासियाँ सब उदास होगये। वे राजमती के मुँह पर पंखा करने

लगे। मूर्छा दूर होते ही राजेमती ने अपनी माता से कहा माँ क्या राजकुमार ने मुझे त्याग कर दीक्षा ग्रहण करली है? अगर यह सच है तो फिर मैं यहाँ क्यों रहूँ? माँ मुझे भी आज्ञा दो, मैं भी कुमार के साथ दीक्षा लेकर जाना चाहती हूँ।

माता ने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा बेटी! यह क्या कह रही हो? राजकुमार ने दीक्षा लेली तो क्या हुआ। मैं तेरे लिए दूसरे वर की खोज कराऊंगी और तेरा विवाह रचाऊंगी। बेटी! तू क्यों इतना दुःख करती है। राजेमती ने कहा माताजी यह आप क्या कह रही हैं? मैं तो तन मन से कुमार अरिष्ट नेमि को ही अपना पति मान चुकी हूँ। भले ही वे मुझे त्याग कर चले गये हों, पर मैं अब उन्हें नहीं त्याग सकती। इस-लिये अगर आप मेरा हित चाहती हैं तो मुझे भी दीक्षा ग्रहण करने की अनुमति दीजिए।

राजा और रानी ने कई तरह से समझाया, और दास दासियों ने भी उसे मनाया, लेकिन राजेमती ने अपना विचार नहीं बदला। आखिरकार उसने अपने माता पिता की आज्ञा से दीक्षा ग्रहण करली।

राजेमती की दीक्षा के समाचार से कई राजकुमारिकाएँ विरक्त हो गयीं, और बात ही बात में राजेमती के साथ सैकड़ों दीक्षित हो गयीं। राजेमती भी उन सबको साथ लेकर गिरनार पर्वत पर चली गई। जहां कुमार अरिष्टनेमि तप कर रहे थे। वहां पहुँच कर उसने भी कठिन तप करना प्रारंभ किया। जिससे कुछ ही दिनों में उसको केवल ज्ञान प्राप्त हो गया।

प्यारी कन्याओं! अगर तुम भी राजेमती की तरह अपना आचरण पवित्र बनाओगी और अपने धर्म पर दृढ़ रहोगी तो तुम्हारा नाम भी उनकी तरह दुनियां में अमर हो जायगा।

१—अरिष्टनेमि साधु क्यों बने?
२—राजमती ने अपनी माँ से क्या कहा?
३—नेमि नाथ कौन थे?

पाठ २४

मेरी भावना

(७)

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे।
लाखों वर्षों तक जीऊं, या मृत्यु आज ही आजावे॥
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे॥

(८)

होकर सुख में मग्न न फूलें, दुःख में कभी न घबरावें।
पर्वत नदी श्मशान भयानक, अटवी से नहीं भय खावें॥
रहें अडोल अकंप निरंतर, यह मन दृढ़तर बन जावे।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग में, सहनशीलता दिखलावें॥

(९)

सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे।
बैर पाप अभिमान छोड़कर, नित्य नये मंगल गावें॥
घर घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावें।
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्म फल सब पावें॥

(१०)

ईति भीति व्यापे नहीं जगमें, वृष्टि समय पर हुआ करे ।
धर्म निष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे ॥
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे ।
परम अहिंसा धर्म जगत में, फैल सर्व हित किया करे ॥

(११)

फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे ।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहीं, कोई मुख से कहा करे ॥
बनकर सब 'युग वीर' हृदय से, देशोन्नति रत रहा करें ।
वस्तु स्वरूप विचार खुशी से, सब दुख संकट सहा करें ॥

कठिन शब्दार्थ —

लालच=लोभ । अडोल=अचल । निरंतर=सदा ।
इष्ट=प्रिय । भुगतत=यथाकाम । कटुक=कड़वा ।
ईति=प्लेग आदि रोग टिड्डियाँ चूहों का उपद्रव ।
मरी=एक तरह की बीमारी । अटवी=जंगल ।
अकंप=स्थिर । दृढ़तर=मजबूत । वियोग=जुदाई ।
दुष्कर=कठिन । भीति=भय । दुर्भिक्ष=अकाल ।
संकट=मुसीबत ॥

—※※※—

पाठ २४

मेरी भावना

(७)

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे।
लाखों वर्षों तक जीऊं, या मृत्यु आज ही आ जावे॥
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे॥

(८)

होकर सुख में मग्न न फूलें, दुख में कभी न घबरावें।
पर्वत नदी श्मशान भयानक, अटवी से नहीं भय खावें॥
रहें अडोल अकंप निरंतर, यह मन दृढ़तर बन जावे।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग में, सहनशीलता दिखलावे॥

(९)

सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे।
बैर पाप अभिमान छोड़कर, नित्य नये मंगल गावें॥
घर घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावें।
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्म फल सब पावें॥

(१०)

ईति भीति व्यापे नहीं जगमें, वृष्टि समय पर हुआ करे।
धर्म निष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे॥
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे।
परम अहिंसा धर्म जगत में, फैल सर्व हित किया करे॥

(११)

फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहीं, कोई मुख से कहा करे॥
बनकर सब 'युग वीर' हृदय से, देशोन्नति रत रहा करें।
वस्तु स्वरूप विचार खुशी से, सब दुख संकट सहा करें॥

कठिन शब्दार्थ —

लालच=लोभ। अडोल=अचल। निरंतर=सदा।
इष्ट=प्रिय। दुष्कृत=पापकाम। कटुक=कड़वा।
ईति=प्लेग आदि रोग टिड्डियाँ चूहों का उपद्रव।
मरी=एक तरह की बीमारी। अटवी=जंगल।
अकम्प=स्थिर। दृढ़तर=मजबूत। वियोग=जुदाई।
दुर्धर=कठिन। भीति=भय। दुर्भिक्ष=अकाल।
संकट=मुसीबत॥



पाठ २५

सती सुभद्रा

जिनदास अपनी नगरी के एक प्रमुख सेठ थे। आपने समाज में ही नहीं राज्य में भी अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। पति पत्नी दोनों की अपने धर्म पर अटूट श्रद्धा थी। उनकी एक मात्र प्यारी सन्तान का नाम था 'सुभद्रा'। सुभद्रा पर भी उसके माता पिता के धार्मिक संस्कारों का असर पड़े बिना न रहा। उसने बचपन में ही यह प्रतिज्ञा करली कि "मैं विवाह करूँगी तो किसी जैन युवक के साथ ही, अन्यथा आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करूंगी।" माता पिता सुभद्रा की इस प्रतिज्ञा से असन्तुष्ट नहीं थे। लेकिन अब वे योग्य धार्मिक वर की तलाश में सदा चिन्तित रहने लगे।

एक दिन बुद्धदास नामक एक सेठ का लड़का, उस नगरी में चला आया। सुभद्रा के रूप को देखकर वह उस पर मोहित हो गया। उसने उसके साथ विवाह करना चाहा, लेकिन जैन बने बिना दूसरा कोई चारा नहीं था। इसलिये वह धीरे धीरे जैन आचार विचारों

का ध्यान करने लगा और सदा मुनिराजों के पास धर्म स्थानों में ही रहने लगा।

कुछ ही दिनों में उसने अपने नकली धर्माचरण से सेठ को प्रसन्न कर लिया। सेठ जिनदास ने उसे धार्मिक समझ कर प्रसन्नता से अपनी लड़की सुभद्रा के साथ उसका विवाह कर दिया।

विवाह हो जाने पर सुभद्रा अपने ससुराल गई तो पहले की तरह यहां भी अपना व्रत नियम करने लगी। उसे देख कर—एक दिन बुद्धदास की माता ने उससे कहा—बहूरानी! इस तरह मुँहपर बाँधकर बैठ जाना और शान्तिनाथ शान्तिनाथ करना तो मूर्खों का काम है। अपने सद् भाग्य से आज तुमको बुद्ध का धर्म मिला है इसलिये अब अपने इस पाखंड धर्म को छोड़ कर इस पवित्र धर्म का आराधन कर बेटी। इससे तेरा कल्याण होगा।

सुभद्रा ने सविनय उत्तर देते हुए कहा—माताजी! आपकी आज्ञा का पालन करना मेरा कर्तव्य है। क्योंकि मैं आपकी बहू बन चुकी हूं। लेकिन आज्ञा मोह से रहित होनी चाहिये। मेरे पवित्र जैन धर्म के पालन में आपकी आज्ञा बाधक नहीं होनी चाहिये।

यही मेरी प्रार्थना है। माताजी मुझे मेरा धर्म प्राणों से भी अधिक प्यारा है। और अरिहन्त शरण ही अमहायों का सहारा है। इसलिये मैंने इसे हृदय में अंगीकार किया है। अब मला इसे कैसे छोड़ सकती हूँ।

सास ने लोभ देते हुए सुभद्रा से कहा-बहू अगर तू बौद्ध धर्म स्वीकार कर लेगी तो सारे घर का भार तुझे सौंप दूंगी। घरके सब लोग तेरा आदर सन्मान करेंगे। इसलिये नादानी मतकर और अपने हठ को छोड़दे। सुभद्रा ने कहा,माताजी आप मुझे विवश न करें, मैं अपने धर्म को छोड़कर मान सन्मान को पाना पाप समझती हू। मुझे ऐसे मान सन्मान की भूख नहीं, मुझे तो मेरा धर्म ही प्यारा है।

सास ने क्रोधित होकर कहा लातों के देव बातों से नहीं मानते हैं। अच्छा अब देखती हूँ तू कैसे नहीं मानती है। भोली बहू! क्या मगर से बैर रखकर मछली तालाब में आराम से रह सकेगी?

माता के कहने पर बुद्धदास ने भी कई तरह से सुभद्रा को समझाया, प्रलोभन दिखाया और अन्त में धमकी भी दी लेकिन सुभद्रा पर इसका कोई असर

नहीं हुआ। उसने कहा प्राणेश्वर! आप चाहे जितना कष्ट देवें मैं उन्हें हँसती हँसती सहन करुंगी लेकिन मैं अपने धर्म से विमुख होना पसन्द नहीं करुंगी। स्वामिन्! सुख किसे नहीं सुहाता है? लेकिन जो सुख धर्म का बलिदान माँगता—वह सुख दुःख से भी बुरा होता है। अपनी आत्मा को और आपको धोखा देना नहीं चाहती। मैं धोखा देकर सुख पाना भी महान पाप समझती हूँ—स्वामी।

बुद्धदास ने आवेश में आकर कहा-बस, चुप रह। मैं अधिक कुछ नहीं सुनना चाहता। यह अच्छी तरह से समझ लेना कि जब तक तूँ बौद्ध धर्म को स्वीकार नहीं करती तब तक मैं तुझसे सम्पर्क भी नहीं करूँगा। देखता हूँ कब तक तूँ अपना धर्म नहीं छोड़ती है।

सुभद्रा ने नम्र होकर उत्तर दिया। आप जैसा भी उचित समझें करें। आप मेरे स्वामी हैं। मैं आपके मार्ग में बाधक नहीं बनूंगी, हम अबलाओं के तो संसार में केवल दो ही सहारे हैं। एक स्वामी और दूसरा परमात्मा है। दुर्भाग्य से स्वामी छोड़ दे, तो फिर और को परमात्मा का ही अवलम्बन रह जाता है।

जो जीव धर्म करते हैं–धर्म का उपदेश देते हैं, और धर्म से ही अपनी जीविका चलाते हैं उनका जागृत रहना अच्छा है। क्योंकि धर्मी पुरुष जागे रहने पर स्वयं भी धर्माचरण करेंगे और दूसरों को भी सत्कार्य में जोड़ेंगे। अतः धार्मिक पुरुषों का जागना अच्छा है।

(३) जयन्ती ने फिर दूसरा प्रश्न पूछा भगवन्! प्राणी सबल अच्छा या दुर्बल?

भगवान ने कहा जो जीव अधर्मी हैं, तरह तरह के पाप करते हैं, वे दुर्बल अच्छे हैं। क्योंकि वे दुर्बल रहने से पाप कम नहीं कर सकेंगे। इसी तरह धार्मिक प्राणियों का सबल होना अच्छा है। क्योंकि वे बलवान हुए वो कष्टों को सह कर स्वपर का अधिक कल्याण कर सकेंगे।

(४) जयन्ती ने फिर प्रश्न किया–भगवन्! जीवों का परिश्रमी पन अच्छा है या आलसी पन?

भगवान ने कहा जयन्ती! जो जीव अधर्म करने वाले हैं–उनका आलसी बनना अच्छा है। क्योंकि वे

आलस्य में पड़े रहेंगे तो अधर्म का कार्य अधिक नहीं कर सकेंगे। आलस्य के कारण रही हुई पापाचरणों की कमी भी उनके लिये और दूसरों के लिये भलाई का निमित्त बनेगी। इसलिये अधर्मी जीवों का आलसीपन ही अच्छा है। जो जीव धर्मी और धर्मानुरागी हैं उनका परिश्रमीपन अच्छा है। वे परिश्रमी होंगे तो स्वयं भी सत्कर्म का विशेष साधन करेंगे और दूसरों को भी अपने साथ धर्म में लगा सकेंगे। परिश्रम की कमी में वे अधिक उपकार नहीं कर सकते। इसलिये उनका परिश्रमीपन अच्छा है।

(५) जयन्ती ने अन्तिम प्रश्न पूछते हुये कहा—श्रुत इन्द्रिय के वशीभूत होकर जीव क्या कर्म बाँधता है?

भगवान ने उत्तर दिया—हे जयन्ती! श्रुत इन्द्रिय के अधीन बना हुआ जीव आयुष्य कर्म को छोड़कर ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, नाम, गोत्र और अन्तराय इन सात कर्मों को छोटी स्थिति के हों तो दृढ़ करता है।

मन्द रसवाला को तीव्र रसवाला करता है। इसी

तरह पाँचों इन्द्रियों के वशीभूत बने हुए जीव की भी गति समझ लेनी चाहिये।

इस प्रकार भगवान की वाणी सुनकर जयन्ती श्राविका को बड़ा सन्तोष हुआ, इससे संशय दूर हुआ और वह खुशी खुशी अपने घर लौट आई।

प्रश्न

१ जयन्ती कौन थी?
२ उसने भगवान से क्या २ प्रश्न पूछे?
३ जीवों का सोना अच्छा है या जागना?

जैनधर्म की विशेषता

पाठ २८

जैनधर्म का स्थान संसार के विविध धर्मों में अजोड़ है। वह प्राचीनता के साथ अपनी मौलिक विशेषता भी रखता है। शैव, वैष्णव, बौद्ध और ईसाई आदि मतों की तरह जैन यह नाम किसी व्यक्ति विशेष का सूचक नहीं

है। जैन का अर्थ है राग, क्रोध आदि विकारों को जीतने वालों का धर्म, अर्थात् शिव, महावीर या महा पद्म कोई भी नाम क्यों न हो जिसने अपने रागादि दुर्गुणों का नाश कर दिया है, उनका चलाया हुआ मार्ग ही जैन धर्म है। इतना व्यक्ति मोह से रहित कोई धर्म नहीं मिलता। जैन धर्म की प्रथम विशेषता इसकी व्यापकता है।

संसार के अन्य धर्मों को अधिक से अधिक प्राणियों का अधिकतम हित ही जहाँ इष्ट है, वहां जैन धर्म को समस्त प्राणी मात्र का अधिक से अधिक हित प्यारा है। अन्य धर्मों का पालन बहुत हुआ तो मनुष्य मात्र कर सकते हैं किन्तु जैन धर्म का द्वार तो भी, शूद्र ही नहीं, पशुओं के लिये भी खुला है। जैन शास्त्र में [illegible] कौशिक नाग और सुअर आदि के कई उदाहरण [illegible] हैं। जिनमें धर्म की भावना से उनके लिये [illegible] तक बताई गई है।

जैन धर्म का कहना है कि मनुष्य [illegible] जाति, कुल या उच्च वैभव से नहीं [illegible]

कोई भी गुणवान पुरुष धर्म का पालन कर मनुष्य से देव बन सकता है। इस प्रकार विचार वान प्राणी मात्र को धर्म के द्वारा आत्म विकास का अधिकारी बनाना जैन धर्म की खास विशेषता है। दूसरी विशेषता—यों तो अहिंसा का उपदेश सभी धर्मों में मिलता है परन्तु जैन धर्म की तरह पूर्ण अहिंसा का विचार उनमें नहीं मिलता। अधिकता से वे सब मनुष्य रक्षा का ही उपदेश करते हैं। कुछ भारतीय धर्मों में पशु रक्षा का भी अवश्य उपदेश मिलता है, किन्तु धर्म और देव के नाम पर वहां हिंसा का विधान भी कर दिया गया है। अतएव वैसी अहिंसा अपूर्ण है।

जैन धर्म मनुष्य पशु आदि के सिवाय सूक्ष्म से सूक्ष्म कीट और पृथ्वी जल आदि के जो सूक्ष्म जीव हैं उनकी भी हिंसा का निषेध करता है।

जैन धर्म ने पूर्ण अहिंसा की साधना के लिये योग्यतानुसार क्रमिक मार्ग भी बताया है। जैन धर्म के साधु छोटी से छोटी हिंसा को भी बचाने की कोशिश

है। साधुओं का पैदल, बिना किसी सवारी के भ्रमण इसी मतलब से होता है।

हवा के सूक्ष्म जीवों की भी हिंसा न हो इसलिये उनके मुँह पर मुखवस्त्रिका हुआ करती है। कच्चे फल फूल और जल आदि का भक्षण भूखे रहने पर भी ये लोग नहीं करते। अहिंसा के लिये इतना सूक्ष्म विचार और आचार अन्य शास्त्रों में नहीं मिलता। इसलिये अहिंसा की पूर्णता जैन धर्म की दूसरी विशेषता है।

प्रश्नावली

१ जैन धर्म की व्यापकता किन बातों से है?
२ अन्य धर्मों से जैनधर्म की अहिंसा में क्या विशेषता है?
३ अहिंसा के लिए जैन मुनि कैसी साधना करते हैं?



सन्त वाणी

पाठ २९

समझ सार संसार में, समझू टाले दोष।
समझ समझ कर जीवड़ा, गया अनन्ता मोक्ष॥१॥

समझ शके पाप से, अण समझ हर्षन्त ।
वे लूखा वे चीकना, इण विध कर्म बढन्त ॥२॥
सिद्धा जैसो जीव हैं, जीव सोही सिद्ध होय ।
कर्म मैल का अन्तरा, बूझे विरला कोय ॥३॥
निज आतम का दमन कर, पर आतम को चीन ।
परमातम का भजन कर, सही मत परवीन ॥४॥

कुण्डलिया—

राम नाम तो रुच गयो, तो घर धन्धो नहीं होय ।
धन के कारण पच मरे तो राम न रुचियो कोय ॥
राम न रुचियो काय, लोक ने यूं भरमावे ।
सीधी टेक समाय, फिरा जीवा छोडी नहीं जावे ॥
लौकिक महिमा कारणे, सन्त धरावे नाम ।
'रतनचन्द्र' कहे तेहने किण विध मिलसी राम ॥

चिड़ी कमेडो कागला, रात पड्या नहीं खाय ।
नर देह धारी मानवी, रात पड्या किम खाय ॥
रात पड्या किम खाय, जाय मार्या त्रसप्राणी ।
कीट पतंगा कुंथुवा पडे माखा में आणी ॥

सट गंवाई सुलसली, ईली अएठ ममत ।
'रतन' कहे धिक तेहने, खावे नर कर हेत ॥
जलोदर उत्पन्न हुए ज्यू के पडिया पेट ।
आए मुख में मखिका वमन करावे नेट ॥
वमन करावे नट घट तज मन धठाई ।
वाल करे सुर भग, कीड़ मकड़ी जो थाई ॥
कपाली सड सड मरे बिच्छू तणे सम्बन्ध ।
'रतन' कहे उन मानवी, रात्रि भोजन अन्ध ॥
रात्रि भोजन दोष अति, देखो वेद पुराण ।
एक वर्ष रा त्याग में छः मासी पचखाण ॥
छः मासी पचखाण आण नर मन में समता ।
पावे अमर विमाण, मिले सुख मन ने गमता ॥
'रतनचन्द' धन मानवी सुण सुण द छिटकाय ।
अल्प दिनां रे आयने, अमरापुर में जाय ॥

प्रश्नावली

१ समभु और वे समभू का अन्तर बताओ ?
२ सिद्ध और सामान्य जीव में क्या फर्क है ?
३ नामधारी सन्त के लिये क्या कहा है ?
४ रात्रि भोजन से क्या क्या हानियां होती हैं ?
५ रात्रि भोजन के त्याग में क्या फल है ?

जैन इतिहास की बातें

पाठ ३०

प्र०—क्या जैन धर्म भारत वर्ष में वैदिक धर्म के समान प्राचीन है? महावीर स्वामी के पहले भी इसके कोई धर्म प्रवर्तक हुए हैं?

उ०—हाँ जैन धर्म वैदिक धर्म के समान ही नहीं किन्तु उससे भी अधिक प्राचीन है। सबूत यह है कि जैन तीर्थङ्कर अरिष्टनेमि आदि का उल्लेख वेदों में भी मिलता है। इतिहास काल से अगणित वर्ष पूर्व श्री आदि देव ने इसका पहले उपदेश दिया था। उनके पीछे एक दूसरे के बाद लम्बे काल से २३ धर्म प्रवर्तक और हो चुके हैं।

प्र०—जैन धर्म में मुख्य सम्प्रदायें कितनी और कौन २ सी हैं?

उ०—जैन धर्म की मुख्य सम्प्रदायें दो हैं—श्वेताम्बर और दिगम्बर। श्वेताम्बर सम्प्रदाय के साधु केवल सफेद

रंग के ही वस्त्र रखते हैं दूसरी तरह के नहीं। ऐसे मुनिओं के कारण यह सम्प्रदाय भी श्वेताम्बर कहलाती है। रजो हरण और मुखवस्त्रिका श्वेताम्बर साधुओं के खास चिन्ह हैं जो प्रत्येक मुनि के पास रहा करते हैं। पात्र, पुस्तक आदि धर्म साधनों के सिवाय वे किसी वस्तु का संग्रह नहीं करते। दिगम्बर सम्प्रदाय के साधु बिलकुल नग्न रहते हैं वे धर्म साधन तौरे मारपिच्छी और कमंडल को पास में रक्खा करते हैं।

श्वेताम्बर सम्प्रदाय में एक मूर्तिपूजा को धर्म का अंग मानती है और दूसरी इस धर्म का अंग नहीं मानती इसलिये मूर्तिपूजक एवं अमूर्तिपूजक ऐसी दो सम्प्रदायें हैं। मूर्तिपूजक-मन्दिरमार्गी के नाम से प्रसिद्ध है। अमूर्तिपूजक में साधुमार्गी और तेरापंथी दो सम्प्रदाय हैं। साधुमार्गी को स्थानकवासी भी कहते हैं। दोनों में खास अन्तर यह है कि पहली मन्दिर और मूर्तिपूजा के आरंभ में धर्म मानती है दूसरी नहीं। मूर्ति पूजक सम्प्रदाय मुख वस्त्रिका हाथ में रखती है और अमूर्तिपूजक उसको मुख पर बांधे रखते हैं। तेरापंथी के सिवाय अन्य सब

सम्प्रदायें दान दया और परोपकार में धर्म मानती हैं। तेरापंथी केवल अपने साधुओं को दान देने में ही धर्म पुण्य मानते हैं दूसरे को दान देने और पाठशाला आदि चलाने में पुण्य नहीं मानते।

प्रश्नावली

१ जैन धर्म की प्राचीनता के क्या सबूत हैं?
२ श्वेताम्बर में कितनी सम्प्रदायें हैं?
३ सम्प्रदायों में परस्पर क्या फर्क है?



महावीर जन्म

पाठ ३१

हुआ भारत में नव अवतार।
हुए अपशकुन पाप सदन में मुदित हुआ संसार ॥हुआ०॥
देवों ने बाजे बजाये।
जन्म महोत्सव करने आये॥
मुदित हुए नारकी जीव भी, औरों की क्या बात।
हुए झूठ हिंसा आदिक पापों के घर उत्पात॥

हुआ पापों का भण्डा फोड़,।
धर्म भी आया बन्धन तोड़ ॥
मिटा दीन-दबल मनुजों के मुख का हाहाकार ।
हुआ भारत में नव अवतार ।

(२)

हुआ भारत में नव अवतार ।
धर्म सूर्य उगा आलोकित हुआ अखिल संसार ॥हुआ०॥
अबलायें अचल पसार कर ।
बोल उठी आशा करुणाधर ॥
नूतन आशाओं से भरके, नवा दिया निज माथ ।
कहा किसी ने बंधु हमारा' कहा किसी ने नाथ ॥
हुए आशा युत सारे लोग।
घटने लगा अधम, कुरोग ॥
पृथ्वी चिल्ला उठी नाथ ! अब हरिये मेरा भार ।
हुआ भारत में नव अवतार ।

(३)

हुआ भारत में नव अवतार ।
पशु, निर्बल, अबला, शूद्रों की प्रभुने सुनी पुकार ॥हुआ०॥

लाखों पशु मारे जाते थे।
मुख में तृण रख चिल्लाते थे।
यहाँ नहीं कोई देता था, उन पर कुछ भी ध्यान।
शोणित से रंगता जाता था, सारा जगत महान्।
लगे मिटने हिंसा के कांड।
दया से गूंज उठा ब्रह्मांड।
मिटी गर्जना और सुन पड़ी करुणा की झंकार।
हुआ भारत में नव अवतार।

(४)

हुआ भारत में नव अवतार।
टूटी गई सभी दीवारें रहा न कारागार ।।हुआ०।।
जग में बजा साम्य का डंका।
मन की निकल गई सब शंका।
घृणा और विद्वेष न ठहरे, सजा प्रेम का साज।
बैठे पास पिता के चारों भाई मिल कर आज।
हुआ झूंठों का मुँह काला।
सत्य का हुआ बोलबाला।

एक बार हिल उठे हृदय बाबा के [illegible]
हुआ भारत में नव अवतार।

—[illegible]

प्रश्नावली

१ महावीर के जन्म से क्या हुआ?
२ दूसरी कविता में क्या बताया गया है।
३ कविता अभ्यास करो।



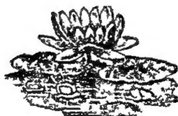
गुरु-वंदना

पाठ ३१

(तर्ज—आओ २ [illegible])

आओ २ सब प्यारी सखियों [illegible]
प्रात उठ मंगलमय प्रभु का [illegible]
भव २ के उपकारी सतगुरु, [illegible]
कनक कामिनी के जो त्यागी [illegible] ॥ १ ॥
कर्म पंथ छेदन के हेतु, [illegible]
[illegible]

गुरु मुख देखे दुःख टले सब होवे मंगलाचार।
सुर तरु सम सेवो नित मनिजन सुख शांति दातार ॥३॥
उपकारी सद्गुरु सम दूजा नहा कोई संसार।
मोह भँवर में पड़े हुए को यही बड़ा आधार ॥४॥
क्रोध, लोभ से दूर हटाकर देते हमें बचाय।
इसीलिये कहता है 'मगनमुनि' गुरु शरण लो जाय ॥५॥



यदि आप जैनी हैं ?

तो

जैन साहित्य, जैन संस्कृति, जैन इतिहास के ज्ञान प्राप्ति हेतु जैनाचार्यों व जैन विद्वानों द्वारा लिखित खोज पूर्ण उत्तम पठनीय सामग्री से युक्त मासिक पत्र

"जिन वाणी"

अवश्य पढ़िये और इसके ग्राहक बनिये । घर बैठे पूज्य जैनाचार्यों के प्रवचन भी आप 'जिन वाणी' द्वारा पढ़ सकेंगे । जैन शास्त्रों की बातें भी सरल सुगम भाषा में आप इसमें पावेंगे ।

जैन साहित्य प्रचार के लिये यह अपने ढंग की एक मात्र पत्रिका है ।

वार्षिक मूल्य ४) मात्र

पता—'जिनवाणी' कार्यालय, जोधपुर ।